राजस्थान राज्य

बनाम

विनोद कुमार

(2008 की आपराधिक अपील No.1887)

18 मई, 2012

[डॉ. बी. एस. चौहान और दीपक मिश्रा, जे. जे.]

एस् एस् 1860: एसएस। 376 और 376/120ख दंड संहिता-न्यूनतम निर्धारित सजा - निचली अदालत ने आर. आई. की 7 साल की सजा सुनाई। मुख्य अभियुक्त की सजा को उच्च न्यायालय ने घटाकर 5 साल कर दी। और सह-अभियुक्त जो पहले से ही 11 महीने और 25 दिन की सजा भुगत चुका था, को भुगती हुई सजा तक सजा कम कर दी गई। निर्धारित हस्तगत मामले में, आरोपी ने केवल अनुरोध किया सजा में कमी की जाए, लेकिन लोक अभियोजक द्वारा प्रार्थना का पुरजोर विरोध किया। हालांकि उच्च न्यायालय ने आगे ध्यान दिया कि न्यूनतम 7 साल की सजा से कम की सजा हेतु पर्याप्त और विशेष कारण की आवश्यकता होती है जबकि ऐसा कोई कारण उसके द्वारा अभिलिखित नही किया गया है, और इस प्रकार उच्च न्यायालय अनिवार्य आवश्यकता का अनुपालन सुनिश्चित करने में विफल रहा। ऐसा आदेश कानून की अनिवार्य आवश्यकता का उल्लंघन है और विधायी जनादेश को पराजित किया है- मामले की तथ्यों

और परिस्थितियाँ में उच्च न्यायालय द्वारा दी गई सजाएँ अदालत ने खारिज कर दिया और निचली अदालत द्वारा दी गई सात साल के आर. आई. दण्ड को यथावत रखा गया।

एस. 376 (1), परंतुक-न्यूनतम से कम सजा-के लिए- "पर्याप्त और विशेष कारण"- निर्धारितः वैधानिक आवश्यकता सात वर्षों से कम सजा देने हेतु पर्याप्त और विशेष कारणों को अभिलिखित करना आवश्यक है। हस्तगत मामले में, कानून में निर्धारित दंड से कम दंड देने हेतु वहाँ अपराध से संबंधित असाधारण कारण होने चाहिए और साथ ही अपराधी के लिए-सजा प्रक्रिया के संदर्भ में जिस विशेष मामले में सजा काे कम किया जा रहा हो, ऐसे विशेष तथ्य अभियुक्त के लिए 'विशेष' कारण होने चाहिए जिनमें सजा दी जा रही है।

विधान का विवेचनः-

अपवाद खंड- व्याख्या। 376 आईपीसी परंतुक के मामले में अपवादित खण्ड का निवर्चन सदैव कठोर रूप से किया जाना चाहिए चाहे उससे किसी व्यक्ति विशेष को परेशानी ही क्यों ना हो। कानून में स्वभाविक धारणा यह है कि अधिनियमित करने वाला भाग आम तौर पर होना चाहिए। आवश्यक परंतुक द्वारा उत्कीर्ण और एक निर्माण जो अपवादों को अनावश्यक और अनावश्यक बना देगा ऐसी विचेचना से बचना चाहिए- परंतुक के तहत यह शक्ति नहीं होनी चाहिए कि उसका एक नियमित,

अनावश्यक रूप से उपयोग किया जाए, इस कारण से एक अपवाद खंड के लिए सख्त व्याख्या की आवश्यकता होती है- न्यायालय में विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए अपवाद खंड को "असाधारण कारणों" को दर्ज करना होगा परंतुक का सहारा लेना-ऐसे कारणों को दर्ज नही करना अनुचित है। इस अपवाद खण्ड की शक्ति के तहत इसका उपयोग मनमाना दैनिक, अनौपचारिक, अभिमानपूर्वक नही होना चाहिए। न्यायालय को अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय अपवादित खण्ड के तहत अपवादित कारणों को अभिलिखित किया जाना आवश्यक है। असाधारण राहत देने के लिए विशेष कारणों को अभिलिखित किया जाना आवश्यक है। पर्याप्त और विशेष कारण क्या है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों व परिस्थितियों पर निर्भर करता है। और कोई सीधा जैकेट सूत्र निर्धारित नहीं किया जा सकता है।

दण्ड/सजा करना

आई. पी. सी. की धारा 376 के तहत सजा निर्धारितः इस मुद्दे पर कानून संक्षेप में यह है कि सजा हमेशा अभियुक्त या पीड़ित तथा अपराध की गंभीरता के अनुपात में/धर्म, नस्ल, जाति, आर्थिक या सामाजिक स्थिति सजा की मात्रा निर्धारित करने के लिए प्रासंगिक कारक नहीं हैं। अदालत को सभी उत्तेजक और शमन कारकाेंं पर विचार करने के बाद सजा जिन कारकों और परिस्थितियों में अपराध किया गया है को ध्यान में

रखते हुए सजा का निर्धारण करना चाहिए। प्रतिबद्धता-अभियुक्त का आचरण व मानसिक अवस्था तथा यौन उत्पीड़ित पीड़ित की आयु और उसकी गंभीरता आपराधिक कार्य में सर्वोपरि महत्व के कारक हैं। अदालत को तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए निष्पक्ष रूप से सजा देने में अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए।

मामला-विधायिका ने न्यूनतम सजा आई.पी.सी. डब्ल्यू.ई.एफ. 25.12.1983 में संशोधन द्वारा लागू करने की शुरुआत की। इसलिए अदालतें उक्त प्रभाव को ध्यान में रखने के लिए बाध्य हैं।

मीत सिंह बनाम पंजाब राज्य, 1980 (2) एससीआर 1152 = ए.आई.आर. 1980 एस.सी.1141; मधुखर भास्करराव जोशी बनाम महाराष्ट राज्य, 2000(4) सपलीमेंट एस.सी.आर. 475 = ए. आई. आर. 2001 एससी 147; जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम विनय नंदा, 2001 (1) ससीआर 399 = ए.आई.आर. 2001 एससी 611; कर्नाटक राज्य बनाम राजू, 2007(9) एससीआर 970 = एआईआर 2007 एससी 3225; मध्यप्रदेश सरकर बनाम बाबू बरकारे @ दलाप सिंह, 2005(1) पूरक एससीआर 381 = एआइआर 2005 एससी 2846; दिनेश @बुद्ध बनाम राजस्थान राज्य, 2006 (2) एस. सी. आर. 793 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1267; शैलेश जसवंतभाई और अन्न बनाम गुजरात राज्य और अन्य, 2006 (1) एस. सी. आर. 477 = (2006) 2 एस. सी. सी. 359;

और मध्य प्रदेश राज्य बनाम बसोदी 2009 (6) एस. सी. आर. 1166 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 3081; कर्नाटक राज्य बनाम कृष्णप्पा, 2000 (2) एससीआर 761 = एआईआर 2000 एससी 1470; पंजाब राज्य बनाम प्रेम सागर और अन्य, 2008 (12) एससीआर 959 = (2008) 7 एससीसी 550; मध्य प्रदेश राज्य बनाम संतोष कुमार, 2006 (3) पूरक एससीआर 548 = एआईआर 2006 एससी 2648; हरबंस सिंह बनाम पंजाब राज्य, 1985 (1) एससीआर 214 = ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 1594; आंध्र प्रदेश राज्य बनाम वासुदेव राव, 2003 (5) पूरक एस. सी. आर. 500 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 960; राज्य मध्यप्रदेश राज्य बनाम बबूलाल, 2007(12) एससीआर 795= एआईआर 2008 एससी 582; राजस्थान राज्य बनाम गजेंद्र सिंह, 2008 (11) एससीआर 816 = (2008) 12 एससीसी 720; कमल किशोर आदि बनाम हिमाचल राज्य = 2000(3) एससीआर 473= एआइआर 2000 एससी 1920; भूपिंदर शर्मा बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, 2003 (4) पूरक एससीआर 792 = एआईआर 2003 एससी 4684; और आंध्र राज्य प्रदेश बनाम पोलामाला राजू @राजाराव, 2000 (2) पूरक एससीआर 329 = एआईआर 2000 एससी 2854; एम. पी. बनाम बाला @बलराम, 2005 (3) पूरक एस. सी. आर. 859 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3567; और रावजी उर्फ राम चंद्र बनाम राजस्थान राज्य 1995(6) पूरक एससीआर 195=ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 787-पर निर्भर।

एस. सुंदरम पिल्लई, आदि बनाम वी. आर. पट्टाबिरमन, 1985 (2) एससीआर 643 = एआईआर 1985 एससी 582; भारत संघ और अन्य बनाम मै. वुड पेपर्स लिमिटेड और अन्य 1990 (2) एससीआर 659 = एआईआर 1991 एससी 2049; ग्रासिम इंडस्ट्रीज लिमिटेड और अन्य बनाम मध्य प्रदेश और अन्य, ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 66; लक्ष्मीनारायण आर. भट्टड व अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य 2003 (3) एससीआर 409 = ए.आई.आर. 2003 एस.सी. 3502; परियोजना अधिकारी, आई.टी.डी.पी. और अन्य बनाम पी. डी चाको 2010 (6) एससीआर 846 = एआईआर 2010 एससी 2626; और केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्त, नई दिल्ली बनाम हरि चंद श्री गोपाल और अन्य 2010 (13) एससीआर 820 = (2011) 1 एससीसी 236- संदर्भित किया गया।

मामला कानून संदर्भः

1980 (2) एससीआर 1152 भरोसा किया पैरा 9

2000 (4) पूरक एससीआर 475 भरोसा किया पैरा 10

2001 (1) एससीआर 39 भरोसा किया पैरा 11

2007 (9) एससीआर 970 भरोसा किया पैरा 12

2005 (1) पूरक। एस. सी. आर. 381 भरोसा किया पैरा 12

2006 (2) एससीआर 793 भरोसा किया पैरा 12

2006 (1) एससीआर 477 भरोसा किया पैरा 12

2009 (6) एससीआर 1166 भरोसा किया पैरा 12

2000 (2) एससीआर 761 भरोसा किया पैरा 13

2008 (12) एससीआर 959 भरोसा किया पैरा 14

2006 (3) पूरक एससीआर 548 पर भरोसा किया पैरा 15

1985 (1) एससीआर 214 भरोसा किया पैरा 15

2003 (5) पूरक। एस. सी. आर. 500 भरोसा किया पैरा 15

2007 (12) एससीआर 795 भरोसा किया पैरा 15

2008 (11) एससीआर 816 भरोसा किया पैरा 1

2000 (3) एससीआर 473 भरोसा किया पैरा 16

2003 (4) पूरक। एससीआर 792 भरोसा किया पैरा 16

2000 (2) पूरक। एससीआर 329 भरोसा किया पैरा 16

2005 (3) पूरक। एस. सी. आर.859 भरोसा किया पैरा 17

1995 (6) पूरक। एससीआर 195 भरोसा किया पैरा 18

1985 (2) एससीआर 643 संदर्भित किया पैरा 19

1990 (2) एससीआर 659 संदर्भित किया पैरा 19

एआईआर 2000 एससी 66 संदर्भित किया पैरा 19

2003 (3) एससीआर 409 संदर्भित किया पैरा 19

2010 (6) एससीआर 846 संदर्भित किया पैरा 19

2010 (13) एससीआर 820 संदर्भित किया पैरा 19

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील 1887/2008

उच्च न्यायालय जयपुर की जयपुर एकल पीठ आपराधिक अपील सं. 103/2005 के साथ आपराधिक अपील सं. 1888/2008 उच्च न्यायालय के निर्णय व आदेश दिनांक 5.4.2007 से।

राजस्थान अपीलार्थी राम नरेश यादव की ओर से मिलिंद कुमार। उत्तरदाता के लिए नरेश के. शर्मा, विवेक राज सिंह बाजवा, डॉ. चौधरी एन के लिए शम्सुद्दीन खान, लाल प्रताप सिंह, राम निवास, एन. अन्नपुरानी।

न्यायालय का आदेश दिया गया था।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2012] 6 एस. सी. आर.

आदेश

1. हस्तगत अपील 2005 की एसबी आपराधिक अपील संख्या 103 और 2005 की एसबी आपराधिक अपील संख्या 82 में राजस्थान उच्च न्यायालय (जयपुर पीठ) द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांक 5.4.2007 के खिलाफ राज्य द्वारा दायर की गई हैं। जिसके द्वारा, विशेष न्यायाधीश, अनुसूचित द्वारा प्रतिवादी विनोद कुमार को भारतीय दंड संहिता, 1860

(इसके बाद इसे भारतीय दंड संहिता कहा जाएगा) की धारा 376 और हीरा लाल को धारा 376 के साथ पठित धारा 120 बी भारतीय दंड संहिता के तहत दोषी ठहराया गया। जाति/अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम (इसके बाद इसे एससी/एसटी अधिनियम कहा जाएगा) जयपुर दिनांक 22.1.2005 को सत्र वाद संख्या 123/2002 में पारित किया गया है, लेकिन प्रतिवादी विनोद कुमार की सजा 7 वर्ष से घटाकर 5 वर्ष कर दी गई है। और आरोपी हीरा लाल की सजा 7 साल से 11 महीने 25 दिन की गई है।

2. इन अपीलों को उत्पन्न करने वाले तथ्य और परिस्थितियाँ यह हैं कि 29.8.2002 को, शिकायतकर्ता गुड्डी, अपने बहनोई बाबू लाल के साथ पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के सामने पेश हुई और एक रिपोर्ट प्रस्तुत की कि एक दिन पहले, यानी 28.8.2002 को वह अपने रिश्तेदार की मृत्यु की गमी में शामिल हुईं। वह अपने जीजा/देवर बाबू लाल के साथ वहां से चली गई और जय होटल में रूकी। दो व्यक्ति वहां आए और उनमें से एक ने खुद को थाना प्रभारी बताया और कमरे की जांच करनी चाही। एक अन्य व्यक्ति ने दूसरे रहने वाले बाबू लाल के साथ उसका रिश्ता पूछा। उसने अपने रिश्ते के बारे में बताया लेकिन उन्होंने सवाल उठाया कि होटल रजिस्टर में ऐसे रिश्ते का खुलासा क्यों नहीं किया गया और इसी बहाने वे पूछताछ के लिए कमरे में दाखिल हुए। वे परिवादी के जीजा बाबू लाल को बाहर ले गये। इसके बाद उनमें से एक अकेला कमरे में आया,

अंदर से दरवाजा बंद कर दिया और उसे जबरदस्ती चारपाई पर धकेल दिया और उसके साथ बलात्कार किया। उसने शोर मचाया लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। दुष्कर्म की वारदात को अंजाम देने के बाद वह कमरे का दरवाजा खोलकर भाग गया। उसने उक्त व्यक्ति का हुलिया भी बताया।

3. उपरोक्त रिपोर्ट के आधार पर मुकदमा संख्या 168/2002 धारा 376, 120 बी भारतीय दंड संहिता के तहत दर्ज किया गया और जांच शुरू की गई। जांच के दौरान आरोपियों को गिरफ्तार किया गया और पहचान परेड कराई गई। अभियोक्त्री/ परिवादिया का चिकित्सकीय परीक्षण कराया गया। बाद अनुसंधान, विनोद कुमार और हीरा लाल के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 376, 120बी और एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3(2)(5) के तहत आरोप पत्र दायर किया गया था। अभियोजन पक्ष ने अपने मामले के समर्थन में गुड्डी, बाबू लाल और पीड़िता की जांच करने वाले डॉक्टरों सहित बड़ी संख्या में अन्य गवाहों से पूछताछ की। उत्तरदाताओं से दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद इसे दंड प्रक्रिया संहिता कहा जाएगा) की धारा 313 के तहत जांच की गई। उन्होंने सीधे तौर पर अपनी संलिप्तता से इनकार किया, हालांकि, उन्होंने बचाव में कोई सबूत पेश नहीं किया। रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों की विवेचना करने के बाद, ट्रायल कोर्ट ने उक्त उत्तरदाताओं को क्रमशः धारा 376 भारतीय दंड संहिता और धारा 376/120 बी भारतीय दंड संहिता के तहत दोषी ठहराया और प्रत्येक को 7 साल की कठोर कारावास और 5,000/- का जुर्माना और

डिफ़ॉल्ट रूप से दंडित किया। अभियुक्तों को 3 माह का साधारण कारावास भुगतने का आदेश दिया गया।

4. व्यथित होकर, दोनों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर की जिसका निपटारा आक्षेपित निर्णय द्वारा कर दिया गया है। उच्च न्यायालय ने ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए फैसले के अनुसार उनकी सजा को बरकरार रखा। हालाँकि, उपरोक्तानुसार उनकी सज़ा कम कर दी गई है। इसलिए, ये अपील पेश की गई।

5. राज्य के विद्वान वकील ने तर्क प्रस्तुत किया है कि बलात्कार के मामले में, न्यूनतम सजा 7 वर्ष है और भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत अनिवार्य न्यूनतम सजा 7 वर्ष है जो इससे कम की सजा नहीं होगी। जो जीवन भर हो सकती है या 10 वर्ष तक की अवधि के लिए हो सकती है, बशर्ते कि अदालत फैसले में उल्लिखित पर्याप्त और विशेष कारणों से 7 वर्ष से कम अवधि के लिए सज़ा दे सकती है। वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने कोई विशेष और पर्याप्त कारण दर्ज नहीं किया और सज़ा को काफी हद तक कम कर दिया। इसलिए, यदि उच्च न्यायालय ने उपरोक्त अपराधों के लिए उनकी सजा को बरकरार रखा, तो उनकी सजा को कम करने का कोई औचित्य नहीं था। अतः अपीलें स्वीकार किये जाने योग्य हैं।

6. इसके विपरीत, विद्वान न्याय मित्र श्री नरेश कुमार ने कहा है कि घटना एक दशक से भी अधिक समय पहले की है। उक्त उत्तरदाताओं ने पहले ही उच्च न्यायालय द्वारा दी गई सजा काट ली थी। निस्संदेह, उच्च न्यायालय ने उनकी सजा कम करने के लिए कोई पर्याप्त और विशेष कारण नहीं दिया है, हालांकि उतरदाता की उम्र, उनकी सामाजिक स्थिति, पारिवारिक परिस्थितियाँ को देखते हुए सजा को कम किया गया। इसलिए, आक्षेपित निर्णय और आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। अपीलें खारिज किये जाने योग्य हैं।

7. हमारे द्वारा पक्षों के लिए विद्वान वकीलों द्वारा की गई प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार किया है और अभिलेखों का अवलोकन किया है।

वर्तमान मामले में चूंकि उत्तरदाताओं ने क्रमशः धारा 376 भारतीय दंड संहिता और धारा 376 के साथ धारा 120 बी भारतीय दंड संहिता के तहत अपनी सजा के आदेश को चुनौती नहीं दी है, इसलिए इसे अंतिम रूप मिल गया। इसलिए, विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या उच्च न्यायालय के लिए सजा कम करने का कोई औचित्य हो सकता है और वह भी बिना कोई कारण दर्ज किए।

8. सात साल से कम की सज़ा देने के लिए वैधानिक आवश्यकता लिखित रूप में पर्याप्त और विशेष कारण दर्ज करना है। शब्द "पर्याप्त" के शब्दकोषीय अर्थ फिटनेस के अनुरूप, पर्याप्त, उपयुक्त, परिमाण और सीमा

में समान और पूरी तरह से हैं। "विशेष कारण" का अर्थ असाधारण है; विशिष्ट; विचित्र; दूसरों से भिन्न; किसी विशेष उद्देश्य, अवसर या व्यक्ति के लिए डिज़ाइन किया गया; सीमा में सीमित; कार्य के एक निश्चित क्षेत्र तक ही सीमित है।

इस प्रकार, हस्तगत मामले में, क़ानून में निर्धारित से कम सज़ा देने के लिए, अपराध के साथ-साथ अपराधी से संबंधित असाधारण कारण होने चाहिए।

9. मीत सिंह बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1980 एससी 1141, इस न्यायालय ने अभिव्यक्ति "विशेष कारण" की व्याख्या की गई। इसका अर्थ संबंधित अभियुक्तों के लिए विशेष है। अदालत को प्रत्येक आरोपी के संबंध में दिए गए कारणों पर गौर करना होगा, जिसका मामला सजा देने के लिए उठाया गया है। 'विशेष' शब्द को 'सामान्य' या 'साधारण' शब्द के विपरीत समझना होगा। इस प्रकार, जो कुछ भी एक ही क़ानून द्वारा शासित एक बड़े वर्ग के लिए सामान्य है, उसे उनमें से प्रत्येक के लिए विशेष नहीं कहा जा सकता है। इसलिए, सजा प्रक्रिया के संदर्भ में, जिस मामले में सजा दी जा रही है, उसके तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्त के लिए विशेष कारण 'विशेष' होने चाहिए।

10. मधुकर भास्कर्राव जोशी बनाम महाराष्ट्र राज्य एआईआर 2001 एससी 147 में, इस न्यायालय ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के

तहत एक समान प्रावधान की जांच की, जिसमें यह भी प्रावधान था कि आरोपी को सजा दी जाएगी जो "एक से कम नहीं होगी" वर्ष", हालाँकि, विशेष कारणों को दर्ज करते हुए कम सज़ा दी जा सकती है। न्यायालय ने कहा:

...यह प्रावधान एक दुर्लभ अपवाद के रूप में है, जो न्यायालय को केवल "विशेष कारण" होने पर कारावास की अवधि को एक वर्ष से कम करने की शक्ति देता है और कानून के अनुसार उन विशेष कारणों को लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए। अदालत द्वारा निर्धारित

...संसद ने सजा के मापदंडों को मापा और उस प्रक्रिया में भ्रष्ट सौदों में शामिल अन्य लोक सेवकों पर निवारक प्रभाव डालने के लिए कारावास की न्यूनतम सजा तय करना चाहा...इस तरह का विधायी आग्रह संसद के संकल्प का प्रतिबिंब है भ्रष्टाचार के मामलों को बहुत सख्ती से निपटाएं और भ्रष्ट लोक सेवकों को सजा देने की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता के रूप में निवारण के संकेत देना है...

वर्तमान मामले में, केवल इस तथ्य को कि यह मामला इतने लंबे समय से लंबित था, एक "विशेष कारण" कैसे माना जा सकता है? पीसी अधिनियम के तहत लगभग सभी दोषसिद्धि में यह एक सामान्य विशेषता है और यह इस विशेष मामले की विशेषता नहीं है। यह व्यवस्था का दोष है कि पीसी एक्ट के तहत विचारणीय मामलों की अवधि बहुत लंबी होती

है। यदि इसे संसद द्वारा अनिवार्य न्यूनतम सजा को कम करने के लिए पर्याप्त माना जाता है तो विधायी अभ्यास विफल हो जाएगा।

(महत्व जोड़ें)

11. जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम विनय नंदा एआईआर 2001 एससी 611 में, इसी तरह के मुद्दे से निपटते समय, इस न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:

...जहां कानून का आदेश स्पष्ट और असंदिग्ध है, वहां न्यायालय के पास कानून के तहत दोषसिद्धि पर सजा सुनाने के अलावा कोई विकल्प नहीं है....

किसी मामले में शमन करने वाली परिस्थितियां, यदि स्थापित हो जाती हैं, तो न्यायालय को कारावास या जुर्माने की ऐसी सजा देने के लिए अधिकृत किया जाएगा, जिसे उचित माना जा सकता है, लेकिन किसी अधिनियम के तहत निर्धारित न्यूनतम से कम नहीं हो जो कानून में बताया गया है।...

...न्यूनतम सज़ा देने हेतू अदालत को विशेष कारण दर्ज करने होंगे। 'विशेष कारणों' को 'अच्छे' या 'अन्य कारणों' से अलग करना होगा। यह तथ्य कि दोषी अपनी सेवानिवृत्ति पर पहुंच गया था, कोई विशेष कारण नहीं है। इसी तरह आपराधिक मामले का लंबे समय से लंबित रहना भी कोई विशेष कारण नहीं माना जा सकता....

(महत्व जोड़ें)

12. कर्नाटक राज्य बनाम राजू एआईआर 2007 एससी 3225 में, इस अदालत ने 12 साल से कम उम्र की नाबालिग लड़की से बलात्कार के मामले की सुनवाई की, जिसमें उच्च न्यायालय ने आरोपी की सजा सात साल से घटाकर साढ़े तीन साल कर दी। इस न्यायालय ने माना कि ऐसे मामले में जहां 12 वर्ष से कम उम्र के बच्चे के साथ बलात्कार किया जाता है, सामान्य सजा 10 साल से कम कठोर कारावास नहीं है, हालांकि असाधारण मामलों में "विशेष और पर्याप्त कारणों से" 10 साल से कम की सजा होती है। 'सश्रम कारावास की सजा भी दी जा सकती है. न्यायालय ने पाया कि अभियुक्त या पीड़ित की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, धर्म, नस्ल, जाति या पंथ सजा नीति में अप्रासंगिक विचार हैं। प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर उचित विचार करने के बाद, किसी अपराध के लिए दी जाने वाली न्यायसंगत और उचित सजा का निर्णय लेना चाहिए, जिन गंभीर और कम करने वाले कारकों और परिस्थितियों में अपराध किया गया है, न्यायालय द्वारा निष्पक्ष तरीके से परिस्थितियाँ उन्हें प्रासंगिक के आधार पर नाजुक ढंग से संतुलित किया जाना चाहिए।

इसी तरह का दृष्टिकोण इस न्यायालय द्वारा भी अपनाया गया है मध्य प्रदेश राज्य बनाम बब्बू बरकरे उर्फ दलप सिंह एआईआर 2005 एससी 2846, दिनेश उर्फ बुद्ध बनाम राजस्थान राज्य एआईआर 2006 एससी 1267; शैलेश जसवन्तभाई और अन्य बनाम गुजरात राज्य और अन्य

{2006} 2 एससीसी 359; और मप्र राज्य बनाम बसोदी एआईआर 2009 एससी 3081,

13. कर्नाटक राज्य बनाम कृष्णप्पा एआईआर 2000 एससी 1470 में, इस न्यायालय ने इस मुद्दे से निपटते हुए कहा:

बलात्कार के मामले में सज़ा का पैमाना पीड़िता या आरोपी की सामाजिक स्थिति पर निर्भर नहीं हो सकता। यह अभियुक्त के आचरण, यौन उत्पीड़न की शिकार महिला की स्थिति और उम्र और आपराधिक कृत्य की गंभीरता पर निर्भर होना चाहिए। महिलाओं पर हिंसा के अपराधों से सख्ती से निपटने की जरूरत है। सजा नीति में अभियुक्त या पीड़ित की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, धर्म, नस्ल, जाति या पंथ अप्रासंगिक विचार हैं। समाज की सुरक्षा और अपराधी को रोकना कानून का स्वीकृत उद्देश्य है और उचित सजा देकर इसे हासिल करना आवश्यक है।

(जोर दिया गया)

14. इसी प्रकार पंजाब राज्य बनाम प्रेम सागर एवं अन्य {2008} 7 एससीसी 550, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अवलोकन किया:

क़ानून के तहत निर्धारित सज़ा को कम करने के लिए न्यायाधीशों को किस हद तक विवेकाधिकार होना चाहिए, यह एक जटिल प्रश्न बना हुआ है। हालाँकि, भारत में हमेशा यह विचार रहा है कि सज़ा अपराध के अनुपात में होनी चाहिए। हालाँकि, सभी स्थितियों में उक्त सिद्धांत की प्रयोज्यता पर

सवाल उठ सकते हैं। प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए न्यायिक विवेक का प्रयोग निष्पक्षता से किया जाना चाहिए।

(जोर दिया गया)

15. मध्य प्रदेश राज्य बनाम संतोष कुमार एआईआर 2006 एससी 2648, इस न्यायालय ने माना कि सजा को कम करने के विवेक का प्रयोग करने के लिए, वैधानिक आवश्यकता यह है कि अदालत को फैसले में पर्याप्त और विशेष कारण दर्ज करने होंगे, न कि काल्पनिक कारण जो अदालत को निर्धारित न्यूनतम से कम सजा देने की अनुमति देंगे। कारण न केवल पर्याप्त होना चाहिए बल्कि विशेष भी होना चाहिए। क्या पर्याप्त और विशेष है यह कई कारकों पर निर्भर करेगा और कोई स्ट्रेटजैकेट फॉर्मूला इंगित नहीं किया जा सकता है। (यह सभी देखें: हरबंस सिंह बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1984 एससी 1594, आंध्र प्रदेश राज्य बनाम वासुदेव राव एआईआर 2004 एससी 960; मध्य प्रदेश राज्य बनाम बाबूलाल एआईआर 2008 एससी 582, और राजस्थान राज्य बनाम गजेंद्र सिंह, {2008} 12 एससीसी 720

16. कमल किशोर आदि बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एआईआर 2000 एससी 1920 के मामले में, इस न्यायालय ने माना कि अभिव्यक्ति "पर्याप्त और विशेष कारण" इंगित करती है कि विशेष कारण होना पर्याप्त नहीं है, न ही विच्छेदात्मक रूप से पर्याप्त कारण हैं। न्यायालय को

विवेकाधिकार लागू करने में सक्षम बनाने के लिए दोनों का संयोजन होना चाहिए। कई मामलों में जो कारण सामान्य या सामान्य होते हैं उन्हें विशेष कारण नहीं माना जा सकता। (यह सभी देखें: भूपिंदर शर्मा बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एआईआर 2003 एससी 4684, और आंध्र प्रदेश राज्य बनाम पोलामाला राजू @ राजाराव एआईआर 2000 एससी 2854

17. मप्र राज्य बनाम बाला उर्फ बलराम एआईआर 2005 एससी 3567 में, इस मुद्दे से निपटते समय इस न्यायालय ने कहा:

यहां अपराध बलात्कार है. यह विशेष रूप से जघन्य अपराध है, समाज के विरुद्ध अपराध है, मानवीय गरिमा के विरुद्ध अपराध है, ऐसा अपराध है जो मनुष्य को जानवर बना देता है। दंड विधान में भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत अपराध के लिए अधिकतम और न्यूनतम सजा निर्धारित की गई है। एक बार साबित हो जाने के बाद ऐसे अपराध को हल्के में लेना, अपने आप में समाज का अपमान है। हालाँकि अधिकतम सज़ा देना मामले की परिस्थितियों पर निर्भर हो सकता है, लेकिन आम तौर पर न्यूनतम सज़ा देना अनिवार्य है। भारतीय दंड संहिता की धारा 376 (1) और 376 (2) के प्रावधान अदालत को पर्याप्त और विशेष कारणों से न्यूनतम से कम सजा देने की शक्ति देते हैं। प्रावधान के तहत शक्ति का उपयोग असमानता या नियमित रूप से नहीं किया जाना है। इसका उपयोग संयम से और केवल उन मामलों में किया जाना चाहिए

जहां विशेष तथ्य और परिस्थितियां कटौती को उचित ठहराती हैं। कारण न्यायालय में निहित ऐसे विवेक के प्रयोग के लिए प्रासंगिक होने चाहिए। कारण स्पष्ट और ठोस रूप से बताए जाने चाहिए। केवल विवेक का अस्तित्व ही इसके प्रयोग को उचित नहीं ठहराता। आपराधिक मुकदमे का लंबे समय तक लंबित रहना या बलात्कारी द्वारा पीड़िता से शादी करने की पेशकश प्रासंगिक कारण नहीं हैं। न ही अपराधी की उम्र अपने आप में पर्याप्त कारण है। यह सच है कि सजा के सिद्धांत के रूप में सुधारात्मक सिद्धांत चलन में है, लेकिन ऐसे सिद्धांत को लागू करने की आड़ में, अदालतें समाज और पीड़ित के प्रति अपने कर्तव्य को नहीं भूल सकतीं। बलात्कार से जुड़े मामले में अदालत को पीड़िता की दुर्दशा और उस सामाजिक कलंक पर विचार करना होता है जो पीड़िता को कब्र तक ले जा सकता है और जो ज्यादातर मामलों में, पीड़िता के लिए सामान्य जीवन की सभी संभावनाओं को व्यावहारिक रूप से बर्बाद कर देता है।

(इस पर बल दिया गया)

18. रावजी उर्फ रामचन्द्र बनाम राजस्थान राज्य एआईआर 1996 एससी 787 में, इस न्यायालय ने माना कि आपराधिक मुकदमे में उचित सजा पर विचार करने के लिए अपराध की प्रकृति और गंभीरता महत्वपूर्ण है, अपराधी नहीं। यदि उस अपराध के लिए उचित दंड नहीं दिया गया, जो न केवल व्यक्तिगत पीड़ित के खिलाफ बल्कि उस समाज के खिलाफ भी

किया गया है, जिससे अपराधी और पीड़ित संबंधित है, तो अदालत अपने कर्तव्य में असफल होगी। किसी अपराध के लिए दी जाने वाली सज़ा अप्रासंगिक नहीं होनी चाहिए, बल्कि यह उस अत्याचार और क्रूरता के अनुरूप होनी चाहिए जिसके साथ अपराध किया गया है, अपराध की विशालता सार्वजनिक घृणा की गारंटी देती है और इसे समाज की पुकार का जवाब अपराधी के विरुद्ध न्याय हेतु देना चाहिए।

19. भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत निर्धारित न्यूनतम सजा से कम सजा देना, सामान्य नियम का अपवाद है। अपवाद खंड को केवल असाधारण परिस्थितियों में लागू किया जाना चाहिए जहां अपवाद खंड में शामिल शर्तें मौजूद हों। यह एक स्थापित कानूनी प्रस्ताव है कि अपवाद खंड की हमेशा सख्ती से व्याख्या की जानी चाहिए, भले ही किसी व्यक्ति को कोई कठिनाई हो। अपवाद को मूल कानून के दायरे से बाहर निकालने के उद्देश्य से प्रदान किया जाता है और इसमें क्या शामिल है और विधायिका क्या बाहर रखना चाहती है। कानून में प्राकृतिक धारणा यह है कि लेकिन प्रावधान के लिए, धारा के अधिनियमित भाग में प्रावधान की विषय वस्तु शामिल होगी, अधिनियमित भाग को आम तौर पर ऐसा निर्माण दिया जाना चाहिए जो प्रावधान द्वारा किए गए अपवादों को आवश्यक बना देगा और ऐसे निर्माण से बचना चाहिए जो अपवादों को अनावश्यक और निरर्थक बना दे। प्रोविज़ो का उपयोग सामान्य अधिनियम से विशेष मामलों को हटाने और उनके लिए अलग से प्रावधान करने के

लिए किया जाता है। प्रावधान अधिनियम को व्यावहारिक बनाने के लिए कुछ अनिवार्य शर्तों को पूरा करने पर जोर देकर अधिनियम के इरादे की अवधारणा को बदल सकता है। (वीडियो: एस सुंदरम पिल्लई और अन्य बनाम`आर. पट्टाभिरामन और अन्य एआईआर 1985 एससी 582, भारत संघ और अन्य बनाम एमएस वुड पेपर्स लिमिटेड और अन्य एआईआर 1991 एससी 2049, ग्रासिम इंडस्ट्रीज लिमिटेड और अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य एआईआर 2000 एससी 66, लक्ष्मीनारायण आर भट्टड और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य एआईआर 2003 एससी 3502, परियोजना अधिकारी, आईआरडीपी और अन्य बनाम पीडी चाको एआईआर 2010 एससी 2626 और केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्त, नई दिल्ली बनाम हरि चंद श्री गोपाल और अन्य {2011} 1 एससीसी 236 आदि-आदि

20. इस प्रकार, इस मुद्दे पर कानून को इस आशय से संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है कि सज़ा हमेशा अपराध की गंभीरता के अनुपात में/अनुरूप होनी चाहिए। अभियुक्त या पीड़ित का धर्म, नस्ल, जाति, आर्थिक या सामाजिक स्थिति सजा की मात्रा निर्धारित करने के लिए प्रासंगिक कारक नहीं हैं। अदालत को सभी उत्तेजक और शमन करने वाले कारकों और उन परिस्थितियों पर विचार करने के बाद सजा तय करनी होती है जिनमें अपराध किया गया है। अभियुक्त का आचरण और मन की स्थिति और यौन उत्पीड़न की पीड़िता की उम्र और आपराधिक

कृत्य की गंभीरता सर्वोपरि महत्व के कारक हैं। अदालत को मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निष्पक्ष रूप से विचार करते हुए सजा देने में अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए। प्रावधान के तहत शक्ति का उपयोग सामान्यतः नियमित, अनौपचारिक अंधाधुंध तरीके से नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि अपवाद खंड को सख्त व्याख्या की आवश्यकता होती है। विधायिका ने 25.12.1983 से भारतीय दंड संहिता में संशोधन करके न्यूनतम सजा लगाने की शुरुआत की, इसलिए, अदालतें इसके प्रभाव को ध्यान में रखने के लिए बाध्य हैं।

अपवाद खंड में विवेक का प्रयोग करते समय अदालत को प्रावधान का सहारा लेने के लिए "असाधारण कारण" दर्ज करना होगा। असाधारण राहत देने के लिए ऐसे कारणों को दर्ज करना अनिवार्य है। क्या पर्याप्त और विशेष है यह कई कारकों पर निर्भर करेगा और कोई सीधा जैकेट फार्मूला निर्धारित नहीं किया जा सकता है।

21. वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने पक्षों की ओर से दी गई दलीलों को इस हद तक दर्ज किया कि किसी भी दोषी ने गुणावगुण के आधार पर अपनी अपील में दबाव नहीं डाला क्योंकि अभियोजक गुड्डी के बयान के मद्देनजर सफल होना संभव नहीं था। (पीडब्लू.1), ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किया गया और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत

मजिस्ट्रेट द्वारा उसका बयान 5 सितंबर, 2002 को दर्ज किया गया। इस प्रकार, उन्होंने केवल सज़ा कम करने का अनुरोध किया।

लोक अभियोजक ने सजा कम करने की प्रार्थना का पुरजोर विरोध किया।

इस तथ्य के बावजूद कि उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने गुणावगुण के आधार पर अपनी अपील पर जोर नहीं दिया, उच्च न्यायालय ने बलात्कार के संबंध में ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों की पुष्टि की। उच्च न्यायालय ने कहा:

जहां तक उसके साथ बलात्कार के अपराध का सवाल है, मुझे लगता है कि यह उसके बयान और अन्य अभियोजन साक्ष्य से पूरी तरह से साबित होता है, और मेरा विचार है कि विद्वान ट्रायल कोर्ट ने अभियोजन साक्ष्य पर विस्तार से विचार किया है और सही फैसला किया है। आरोपी व्यक्तियों को दोषी ठहराया गया और दोनों विद्वान वकील गुणावगुण के आधार पर अपनी अपील में दबाव नहीं डालने में सही हैं। दोनों आरोपियों के लिए बलात्कार की सजा की पुष्टि करने के बाद, उच्च न्यायालय ने पाया कि आरोपी हीरा लाल ने खुद बलात्कार नहीं किया, बल्कि केवल विनोद कुमार के साथ बलात्कार किया था। उच्च न्यायालय ने आगे इस प्रकार कहा:

मैं सबूतों पर विस्तार से चर्चा नहीं करना चाहता, लेकिन मुझे निश्चित रूप से उसका मामला 11 महीने और 25 दिनों की कारावास की सजा को कम करने के लिए उपयुक्त लगता है, जो वह पहले ही भुगत चुका है। जहां तक आरोपी विनोद कुमार का सवाल है, मुझे लगता है कि अभियोक्ता के पूरे बयान को देखते हुए उसका मामला कारावास की सजा को कम करने के लिए उपयुक्त है।

(जोर दिया गया)

इस प्रकार, उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने गुणावगुण के आधार पर मामले पर बहस नहीं की, लेकिन उच्च न्यायालय ने सबूतों का संदर्भ देते हुए बलात्कार के निष्कर्ष की पुष्टि की, हालांकि, आगे टिप्पणी की कि अदालत सबूतों पर विस्तार से चर्चा नहीं करना चाहती थी। हम यह समझने में विफल हैं कि रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों पर चर्चा किए बिना बलात्कार के आयोग के निष्कर्षों की पुष्टि कैसे की गई है। यह बिल्कुल भी आवश्यक नहीं था क्योंकि उन पक्षों के वकील ने गुणावगुण के आधार पर अपील पर बहस नहीं की।

22. न्यायालय ने आगे कहा कि 7 वर्ष की न्यूनतम सजा से कम सजा देने की अनुमति केवल पर्याप्त और विशेष कारणों से ही दी जा सकती है। हालाँकि, ऐसा करने के लिए अदालत द्वारा ऐसा कोई कारण दर्ज नहीं

किया गया है, और इस प्रकार, अदालत ऐसी अनिवार्य आवश्यकता का अनुपालन सुनिश्चित करने में विफल रही, लेकिन भारतीय दंड संहिता के तहत निर्धारित न्यूनतम से कम सजा दी गई। ऐसा आदेश कानून की अनिवार्य आवश्यकता का उल्लंघन है और इसने विधायी जनादेश को पराजित किया है। मामले को इस तरह से लापरवाही से तय करने से आपराधिक न्याय वितरण प्रणाली का मजाक बन जाता है।

23. इस प्रकार, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अपील की अनुमति दी जाती है। उच्च न्यायालय द्वारा दी गई सजा को रद्द कर दिया गया है और ट्रायल कोर्ट द्वारा दी गई सात साल की सश्रम कारावास की सजा को बहाल कर दिया गया है।

उत्तरदाताओं को निर्देश दिया जाता है कि वे आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर संबंधित अदालत के समक्ष आत्मसमर्पण करें और अपनी शेष सजा भुगतें। यदि प्रतिवादी उक्त अवधि के भीतर आत्मसमर्पण करने में विफल रहते हैं, तो मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, जयपुर (शहर) को उन्हें हिरासत में लेने और जेल भेजने का निर्देश दिया जाता है। आदेश की एक प्रति विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, जयपुर (शहर), राजस्थान को भेजी जाए।

आर.पी.

अपील स्वीकार की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सुनीता बेडा, आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण- यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।